International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(5): 85-88

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(5): 85-88
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 18-07-2021
Accepted: 27-08-2021

हिम्मत कुमार खटीक
शोधार्थी संस्कृत, विभाग विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी
महाविद्यालय मोहनलाल सुखाडिया
विश्वविद्यालय, उदयपुर राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
हिम्मत कुमार खटीक
शोधार्थी संस्कृत, विभाग विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी
महाविद्यालय मोहनलाल सुखाडिया
विश्वविद्यालय, उदयपुर राजस्थान, भारत

श्रीमद्भागवत पुराण में प्राकृतिक परिदृश्यों का भावनात्मक सम्बन्ध

हिम्मत कुमार खटीक

प्रस्तावना

श्रीमद्भागवत पुराण में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व आध्यात्मिक मूल्य के प्रकरण में प्राकृतिक वातावरण का समन्वय किया गया है । सामाजिक जीवन के उत्थान हेतु सामाजिक संस्कृति के साथ प्राकृतिक वातावरण का विवेचन कर प्रकृति के महत्व को उद्धृत किया है । प्राकृतिक वातावरण बाह्य जगत के साथ तन व मन को भी प्रभावित करता है।

भागवत पुराण में प्रकृति दो रूपों में दृष्टिगोचर होती हैं:-

(1) बाह्य प्रकृति

(2) आंतरिक प्रकृति

बाह्य प्रकृति के अंतर्गत प्रकृति के दृश्यमान जगत का वर्णन मिलता है यथा .

नदियाँ:-

"जल ही जीवन है "इस कथन की यथार्थता का वर्णन श्रीमद्भागवत पुराण में मिलता है यथा परमात्मा ने जल उत्पन्न किया हैं तथा जलवाहक नदियों को विश्वरूप विराट पुरुष की नाड़ियां कहां हैं एवं जल, वायु, आकाश, पृथ्वी को ईश्वरीय स्वरूप बताया है ।

नदियों का धार्मिक व आध्यात्मिक महत्व प्रतिपादित करते हुए उसके स्वच्छता व पवित्रता का वर्णन किया गया है यथा चंद्रवसा, ताम्रपर्णी और वरोदका के पवित्र जल में स्नान द्वारा शरीर व अंत करण को निर्मल करने का वक्तव्य है व कथन है कि गंगा जी का जल सबको पवित्र कर देता है तथा गंगा नदी जो सीता, अलकंदा, चक्षु और भद्रा नदी में विभक्त होकर समुद्र में मिलती हैं। इन नदियों में स्नान करने से यज्ञ के समान फल मिलने का उल्लेख है। [1] बुद्धि को गंगा के अखंड धारा बताते हुए ईश्वर प्रेम (सागर) में विलय हेतु प्रार्थना की गई हैं। [2]

पुराणों में गंगा आदि नदियों को परम कल्याणकारी कहां हैं। श्री कृष्ण ने उद्धव को तात्विक उपदेश देते हुए कहा है कि नदियों में गंगा मैं हूं एवं गंगा नदी का उद्गम ईश्वर का चरणामृत मानते हुए गंगा नदी को पाप नाशक कहां हैं [3] व इसमें स्नान व पान से पवित्रता का उल्लेख है। [4]

वन

प्रकृति की सुंदरता व उसकी महत्ता व उसमें स्थित शान्ति की अनुभूति आदि का वर्णन श्रीमद्भागवत के अनेक प्रसंगों में उद्धृत किया गया है। श्री कृष्ण व बलराम का बाल्यकाल में गोयें चराते हुए खेलने का वर्णन व प्रकृति की सुंदरता में बांसुरी बजाने व आनंद मग्न होने का कथन किया गया है।.

वनं कुसुमितं श्रीमन्नदच्चित्रमृगद्विजम्।
गायन्मयूरभ्रमरं कूजत्कोकिलसारसम् ॥
क्रीडिष्यमाणस्तत् कृष्णो भगवान् बलसंयुतः ।
वेणुं विरणयन् गोपैर्गोधनैः संवृतोऽविशत् ॥
प्रवालबर्हस्तबकस्रग्धातुकृतभूषणाः ।
रामकृष्णादयो गोपा ननृतुर्युयुधुर्जगुः॥ [5]

उस वन में वृक्षों की पाँत.की.पाँत फूलों से लद रही थी। जहाँ देखिये, वहीं से सुन्दरता फूटी पड़ती थी। कहीं रंग.बिरंगे पक्षी चहक रहे हैं, तो कहीं तरह. तरह के हरिन चौकड़ी भर रहे हैं। कहीं मोर कूक रहे हैं, तो कहीं भौंरे गुंजार कर रहे हैं। कहीं कोयलें कुहक रही हैं तो कहीं सारस अलग ही अपना अलाप छेड़े हुए हैं। ऐसा सुन्दर वन देखकर श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण और गौरसुन्दर बलरामजी ने उसमें विहार करने की इच्छा की। आगे.आगे गौएँ चलीं, पीछे पीछे ग्वालबाल और बीचमें अपने बड़े भाईके साथ बाँसुरी बजाते हुए श्रीकृष्ण। राम, श्याम और ग्वालबालों ने नव पल्लवों, मोर पंख के गुच्छों, सुन्दर.सुन्दर पुष्प के हारों और गेरू आदि रंगीन धातुओं से अपनेको भाँति.भाँति से सजा लिया। फिर कोई आनंद में मग्न होकर नाचने लगा तो कोई ताल ठोंककर कुश्ती लड़ने लगा और किसी किसीने राग अलापना शुरू कर दिया।

वृंदावन के वन को सुंदर व सुख प्रदान करने वाला कहा गया है तथा वन में स्थित हरियाली व गोवर्धन पर्वत व यमुना नदी को श्री कृष्णा और बलराम जी के हृदय में प्रीति को उदय करने वाला कहा है। [6]

वन्यजीव

वन्यजीवों का भारतीय जनमानस में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि भारतीय धार्मिक ग्रंथों में अनेक जीव.जंतुओं को आदर व आस्था पूर्वक ईश्वर से जोड़ा गया है यथा दुर्गा माता का वाहन शेर, शिव जी का वाहन बैल, लक्ष्मी का वाहन उल्लू, विष्णु का वाहन गरुड़ आदि। वन्यजीवों का पर्यावरण संतुलन व वर्धन में महत्वपूर्ण सहयोग हैं एवं वन्यजीवों का मनुष्यों से मैत्री व प्रेम भाव भी दृष्टिगत होता है जैसे राजा भरत का हरिण के बच्चे के प्रति प्रेम व वात्सल्य भाव, उनका हरीण के बच्चे की देखभाल में अपना धार्मिक क्रियाकलाप भी छुट जाता था। [7] स्वयं भगवान विष्णु ने अनेक अवतार पशु रूप में लिए हैं यथा वराह अवतार, कश्यप अवतार, मत्स्य अवतार, सिंहावतार आदि ।

भारतवर्ष में देवताओं के साथ उनके वाहन भी पूजे जाते हैं यथा गणेश जी का वाहन मूषक, शिव जी का वाहन बेल तथा गले में आभूषण रूप से सुशोभित सर्प की भी पूजा नाग देवता के रूप में की जाती हैं । एवं गाय की महत्ता तो भारतीय जनमानस में सर्वश्रेष्ठ मानी गयी हैं क्योंकि उसमें सभी देवी देवताओं का निवास माना गया है। भागवत पुराण में कृष्ण का गो के प्रति व गो का कृष्ण के प्रति प्रेम दर्शाया गया है वे अपने नाम व कृष्ण की बांसुरी की धुन में मोहित होकर कृष्ण के पास चली आती थी ।

वन्यजीवों का वध श्रीमद्भागवत पुराण में निंदनीय माना है तथा धर्म की आड़ में पशु हत्या करने वाले को दुष्ट कहां है तथा धर्म के मर्म को जानने वालों के लिए मांस का अर्पण व भक्षण दोनों का निषेध किया गया है.

ये त्वनेवंविदोऽसन्तः स्तब्धाः सरदभिमानिनः ।
पशून् द्रुह्यन्ति विस्रब्धाः प्रेत्य खादन्ति ते च तान्॥ [8]
न दद्यादामिषं श्राद्धे न चाद्याद् धर्मत्त्ववित् ।
मुन्यन्नैः स्यात्परा प्रीतिर्यथा न पशुहिंसया॥ [9]

सागर

श्रीमद्भागवत पुराण में समुद्र . मंथन का प्रसंग सभी को साथ मिलकर उद्योग करने से सफलता प्राप्ति एवं जल को प्रदूषण मुक्त कर उससे अमृत रूपी समृद्धि प्राप्त करने की प्रेरणा प्रदान करता है।

समुद्र. मंथन से उत्पन्न हलाहल विष शिव द्वारा धारण करना समाज के अस्तित्व के लिए आवश्यक था अगर विष को शिव द्वारा धारण नहीं किया जाता तो सभी का नाश निश्चित था उसी प्रकार पर्यावरण में वृक्षों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड ग्रहण कर अमृत रूपी आक्सीजन प्रदान की जाती हैं यहां शिव रूपी वृक्षों का अस्तित्व ही हमें बचाए हुए हैं अतः जिस प्रकार हम शिव को आराध्य मानकर आराधना करते है उसी तरह वृक्षों की महत्ता समझ कर उनके संरक्षण व वर्धन की आवश्यकता है।

पर्वत

भारतीय संस्कृति में चेतन में तो ईश्वरीय अंश देखा जाता है परन्तु जड़ पदार्थों में भी ईश्वर की कल्पना की गई है । भागवत पुराण में तो श्री कृष्ण ने इन्द्र के स्थान पर गोर्वधन पर्वत की पूजा करने को को कहा है क्योंकी पर्वत का अपना महत्व है वे वन्य जीव, वृक्ष आदी के संरक्षण के साथ वर्षा हेतु भी उपयोगी है । भागवत पुराण में श्रीकृष्ण ने तात्विक उपदेश देते हुए कहा है की निवासस्थानों में में सुमेरू, तथा दुर्गम स्थानों में में हिमालय हूँ एवं भागवत पुराण में अनेक पर्वतों का वर्णन किया गया है यथा प्रवर्षण पर्वत जहाँ मेघ सदा वर्षा किया करते है। [10]

कदम्ब वृक्ष का उल्लेख जो सौ योजन तक सुगन्ध फैलाता है तथा कुमुद पर्वत पर शतवल्श नाम का वटवृक्ष किससे प्राप्त होने वाले प्रवार्थों के प्रयोग से बुढ़ापा व रोगों के निवारण का कथन है। कैलास पर्वत का विस्तृत वर्णन जो भगवान शिव का परम प्रिय धाम कहा है व मन्दराचल पर्वत का कथन जिसे श्री हरि ने समुन्द मन्थन में कच्छप अवतार धारण कर अपनी पीठ पर धारण किया था ।

पर्वतों का प्राकृतिक सोन्दर्य व वर्धन एवं वन्य जीव संरक्षण के महत्व के साथ पुराणों ने धार्मिक महत्व भी प्रदान किल गया है परन्तु विडम्बना है की वर्तमान समय में खनिज उत्खनन व भूमि विस्तार की महत्वाकांक्षा ने पर्वतीय क्षेत्रों को हानी पहुंचायी हैं।

आन्तरिक प्रकृति

प्रकृति से मानव जुड़ा हुआ है। प्राकृतिक वातावरण का शरीर के साथ मनुष्य की भावनाओं पर भी प्रभाव पड़ता है । स्वच्छ व सु:खद वातावरण में मनुष्य शान्ती का अनुभव करता है तथा कोलाहल व दुःखद वातावरण में अशान्ति का अनुभव करता हैं। श्रीमद्भागवत पुराण में मानव व समाज की दुःखद व सुःखद परिस्थितियों को प्रकृति के माध्यम से दर्शाया गया है।

दु:खद भाव एवं प्रकृति

महाराज युधिष्ठिर प्रकृति में विकृति को भयंकर अपशकुन मानते हुऐ दुःखद समाचार का अनुमान लगाते हुए भीमसेन को कहते है की आकाश में उल्कापात, पृथ्वी में भूकम्पादि और शरीरों में रोग आदि कितने भयंकर अपशकुन हो रहे हैं, दिशाएँ धुँधली हो गई हैं। सूर्य और चन्द्रमा के चारों और बार बार मण्डल बैठते है। यह पृथ्वीपहाड़ों के साथ काँप उठती हैं । बादल बड़े जोर.जोर से गरजते हैं और जहाँ तहाँ बिजली भी गिरती ही रहती है। शरीर को छेदने वाली एवं धूलिवर्षा से अंधकार फैलाने वाली आँधी चलने लगी है। बादल बड़ा डरावना दृश्य उपस्थित उपस्थित करके सब और खून बरसाते है। देखो! सूर्य की प्रभा मन्द पड़ गई है। आकाश में ग्रह आपस में टकराया करते हैं । भूतों की घनी भीड़ में पृथ्वी और अन्तरीक्ष में आग . सी लगी हुई है। नदी, नद, तालाब और लोगों के मन क्षुब्ध हो रहे हैं। घी से आग नहीं जलती। यह भंयकर काल न जाने क्या करेगा। [11]

हिरण्यकशिपु व हिरण्याक्ष आदि दुष्ठो के जन्म के दुःखद प्रसंग में भी प्रकृति में उपद्रव का कथन किया गया है। . उनके जन्म लेते समय स्वर्ग, पृथ्वी और अन्तरिक्ष में अनेको उत्पात होने लगे जिनसे लोग भयभीत हो गये । जहाँ . तहाँ पृथ्वी और पर्वत काँपने लगे, सब दिशाओं में दाह होने लगा । जगह.जगह उल्कापात होने लगा, बिजलियाँ गिरने लगीं और आकाश में अनिष्ट सूचक धूमकेतु दिखाई देने लगे । बार.बार साँय. साँय करती और बड़े . बड़े वृक्षों को उखाड़ती हुई बड़ी विकट और असह्य वायु चलने लगी। उस समय आँधी उसकी सेना और उडती हुई धूल ध्वजा के समान जान पड़ती थी बिजली जोर.जोर से चमक कर मानो खिलखिला रही थी। घटाओ ने ऐसा सघन रूप धारण किया कि सूर्य चन्द आदि ग्रहों के लुप्त हो जाने से आकाश में गहरा अन्धेरा छा गया । उस समय कहीं कुछ भी नहीं दिखाई देता था। समुन्द दुःखी मनुष्य की भाँति कोलाहल करने लगा, उसमें

ऊँची. ऊँची तरंगे उठने लगी और उसके भीतर रहने वाले जीवों में बड़ी हलचल मच गयी । नदियों तथा अन्य जलाशयों में भी बड़ी खलबली मच गयी और उनके कमल सूख गये। [12] श्रीमद भागवत पुराण में प्रकृति को मानव व समाज के दुखद प्रसंगों में सहभागी बताया गया है तथा दुःखद भावों को प्राकृतिक उथल .पुथल के माध्यम से वक्त किया गया है।

प्रकृति की छाया में सुखद प्रसंग

मानव का जीवन प्रकृति की छाया में ही व्यतीत होता है। प्रकृति से पृथक मानव जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। श्रीमद्भागवत पुराण में अनेक सुखद प्रसंगों व परिस्थितियों का विवेचन प्रकृति के माध्यम से व्यक्त किया गया हैं.

राजा युधिष्ठिर के सुशासन को प्रकृति के प्रसन्नता के माध्यम से दर्शाया गया है। युधिष्ठिर के राज्य में आवश्यकतानुसार यथेष्ट वर्षा होती थी, प्रकृति में पृथ्वी में समस्त अभीष्ट वस्तुएं पैदा होती थी, बड़े.बड़े थनों वाली बहुत.सी गौएँ हुए प्रसन्न रहकर गौशालाओं को दूध से सींचती रहती थी। नदियाँ, समुंद्र, पर्वत, वनस्पति, लताएँ और औषधियां प्रत्येक ऋतु में यथेष्ठ रूप से अपनी.अपनी वस्तुएँ राजा को देती थी। [13] नर. नारायण के जन्म पर प्रकृति की प्रसन्नता का कथन है।

भयोर्जन्मन्यदो विश्वमभ्य नन्दत्सुनिर्वृतम् ।
मनासि ककुभो वाताः प्रसेदुः सरितोऽद्रयः ॥ [14]

इनका जन्म होने पर इस संपूर्ण विश्व ने आनंदित होकर प्रसन्नता प्रकट की । उस समय लोगों के मन, दिशाएँ, वायु, नदी और पर्वत सभी में प्रसन्नता छा गयी ।

वामन भगवान के प्रकट होने पर प्रकृति में प्रसन्नता

दिशः प्रसेदुः सलिलाशयास्तदा
प्रजाः प्रहृष्टा ऋतवो गुणान्विताः।
द्यौरन्तरिक्षं क्षितिरग्निजिह्वा
गावो द्विजाः संजहृषुर्नगाश्च ॥ [15]

उस समय दिशाएँ निर्मल हो गयीं। नदी और सरोवरों का जल स्वच्छ हो गया । प्रजा के हृदय में आनंद की बाढ़ आ गयी। सब ऋतुएँ एक साथ अपना.अपना गुण प्रकट करने लगीं । स्वर्गलोक, अंतरिक्ष, पृथ्वी, देवता, गो, द्विज और पर्वत इन सबके हृदय में हर्ष का संचार हो गया।

प्रकृति अंचल के उग्र दृश्य

मानव जीवन प्रकृति के आश्रित है। प्रकृति की अनुकूलता मानव उन्नति में सहायक हैं तो प्रकृति की प्रतिकूलता मानव के विनाश की भी सुनिश्चित करती हैं।श्रीमद्भागवत पुराण में प्रकृति के अनेक उग्र दुश्यों का विवेचन किया गया है जो किसी दुष्ट की दुष्टता अथवा प्रलय की घटना के फलस्वरूप प्रकृति में विकृति की स्थिति को दर्शाता है यथा. पृथ्वी का मानवीय रूप दिखाकर पृथ्वी द्वारा कहा गया है की दुराचारियों, चोरों इत्यादि दुष्ट लोगों की अधिकता के कारण पृथ्वी ने औषधियो इत्यादि को उत्पन्न करना छोड़ दिया है [16] तथा प्रलयकाल में कालस्वरूप ईश्वर द्वारा प्रकृति में विकृति के माध्यम से ही विनाश का कथन है। [17]

युद्ध के प्रसंगों में भी प्रकृति में कोलाहल का वर्णन हैं यथा . वराह अवतार द्वारा हिरण्याक्ष वध के प्रसंग में कथन है की तब वह महामायावी दैत्य माया पति श्रीहरि पर अनेक प्रकार की मायाओं का प्रयोग करने लगा, जिन्हें देखकर सभी प्रजा बहुत डर गई और समझने लगी कि अब संसार का प्रलय होने वाला है । बड़ी प्रचंड आंधी चलने लगी, जिसके कारण धूल से सब और अंधकार छा गया । सब और से पत्थरों की वर्षा होने लगी, जो ऐसे जान पड़ते थे मानो किसी क्षेपणयंत्र (गुलेल) से फेंके जा रहे हों। बिजली की चमचमाहट और कड़क के साथ बादलों के गिर आने से आकाश में सूर्य, चंद्र आदि ग्रह छिप गये तथा उनसे निरंतर पीब, केश, रुधिर, विष्ठा, मूत्र और हड्डियों की वर्षा होने लगी । [18]

इंद्र एवं बलि के युद्ध में प्रकृति के उग्र दृश्यों का वर्णन है .कुछ ही क्षण बाद आकाश में बादलों की घनघोर घटाएं मंडराने लगी, उनके आपस में टकराने से बड़ी गहरी और कठोर गर्जना होने लगी, बिजलियां चमकने लगी और आंधी के झकझोर ने से बादल अंगारों की वर्षा करने लगे । दैत्यराज बलि ने प्रलय की अग्नि के समान बड़ी भयानक आग की सृष्टि की। की वह बात की बात में वायु की सहायता से देवसेना को जलाने लगी। [19] थोड़ी ही देर में ऐसा जान पड़ा कि प्रबल आंधी के थपेड़ों से समुद्र में बड़ी.बड़ी लहरें और भयानक भंवर उठ रहे हैं और वह अपनी मर्यादा छोड़कर चारों ओर से देवसेना को घेरता हुआ उमड़ा आ रहा है ।

श्रीमद्भागवत पुराण में दुष्टों की दुष्टता अथवा युद्ध के परिणाम स्वरुप प्रकृति की विकरालता को वर्णित किया गया है लेकिन वर्तमान परिदृश्य में भी मानव की भूल व स्वार्थवश प्रकृति को हानि पहुंचाने की स्थिति में भूकंप, बाढ़, अत्यधिक गर्मी व वर्षा एवं ओजोन परत में छिद्र आदि समस्याओं सहित प्रकृति का उग्र दृश्य दृष्टिगोचर हो रहा है व अनेक देशों के मध्य परमाणु बम द्वारा युद्ध का भय बना हुआ है जिससे प्रकृति में विनाशकारी प्रलय आने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता ।

सरस एवं मार्मिक भाव प्रकृति प्रांगण में

श्रीमद्भागवत पुराण में प्रकृति की छत्रछाया में अनेक सरस एवं मार्मिक प्रसंग दृष्टि गोचर होते हैं । श्रीमद्भागवत पुराण के आरंभ में ही श्रीमद्भागवत महात्म्य के अंतर्गत नारद जी यमुना के तट पर एक दुःखी युवती को देखते हैं । उसके पास दो वृद्ध पुरुष अचेत अवस्था में पड़े जोर. जोर से सांस ले रहे थे और वह तरुणी उनकी सेवा करते हुए कभी उन्हें चेत कराने का प्रयत्न करती और कभी उनके आगे रोने लगती थी। नारद जी युवती से उसका परिचय पूछते हैं तब वह कहती हैं कि मेरा नाम भक्ति हैं, यह ज्ञान और वैराग्य नामक मेरे पुत्र हैं । समय के फेर से ही यह ऐसे जर्जर हो गए हैं । यह दिव्य गंगा जी आदि नदियां हैं । यह सब मेरी सेवा करने के लिए ही आयी हैं । इस प्रकार साक्षात देवियों के द्वारा सेवित होने पर भी मुझे सुख शांति नहीं है । वहां अपने दुख का कारण घोर कलयुग को बताती हैं जिसके कारण वह और उसके पुत्र दुर्बल और निस्तेज हो गए हैं । भक्ति रूपी युवती द्वारा अपनी व्यथा सुनाने पर नारद जी उसका दुख दूर करने का उपाय ढूंढते हैं व श्रीमद् भागवत कथा का आयोजन करवाकर भक्ति के दुखों को दूर करते हैं । इसी प्रकार गोकर्ण भी प्रेत योनि से पीड़ित अपने भाई धुंधुकारी को श्रीमद् भागवत कथा का आयोजन करवा कर प्रेत योनि से मुक्ति प्रदान करवाते हैं ।

श्री कृष्ण के विरह से व्याकुल अर्जुन की दशा के वर्णन

एवं कृष्णसखरू कृष्णो भ्रात्रा राज्ञाऽऽविकल्पितः ।
नानाशङ्कास्पदं रूपं कृष्णविश्लेषकर्शितः ॥
शोकेन शुष्यद्वदनहत्सरोजो हतप्रभः |
विभुं तमेवानुध्यायन्नाशक्नोत्प्रतिभाषितुम्॥
कृच्छ्रेण संस्तभ्य शुचः पाणिनाऽऽमृज्य नेत्रयोः।
परोक्षेण समुन्नद्धप्रणयौत्कण्ठ्यकातरः ॥
सख्यं मैत्रीं सौहृदं च सारथ्यादिषु संस्मरन्।
नृपमग्रजमित्याह बाष्पगद्गदया गिरा ॥
विञ्चितोऽहं महाराज हरिणा बन्धुरूपिणा।
येन मेऽपहृतं तेजो देवविस्मापनं महत् ॥

यस्य क्षणवियोगेन लोको ह्यप्रियदर्शनः।
उक्थेन रहितो ह्येष मृतकः प्रोच्यते यथा ॥ [20]

भगवान श्री कृष्ण के प्यारे सखा अर्जुन एक तो पहले ही श्री कृष्ण के विरह से कृश हो रहे थे, उस पर राजा युधिष्ठिर ने उनकी विषादग्रस्त मुद्रा को देखकर उनके विषय में कई प्रकार की आशंकाएं करते हुए प्रश्नों की झड़ी लगा दी । शौक से अर्जुन का मुख और हृदय. कमल सूख गया था, चेहरा फीका पड़ गया था । वह उन्हीं भगवान श्रीकृष्ण के ध्यान में ऐसे डूब रहे थे कि बड़े भाई के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर ना दे सके । श्री कृष्ण की आंखों से ओझल हो जाने के कारण वे बड़ी हुई प्रेम सहित उत्कंठा के परवश हो रहे थे । रथ हाँकने, टहलने आदि के समय भगवान के साथ जो मित्रता, अभिन्नहृदयता और प्रेम से भरे हुए व्यवहार किए थे, उनकी याद. पर. याद आ रही थी ; बड़े कष्ट से उन्होंने अपने शौक का वेग रोका, हाथ से नेत्रों के आंसू पोंछे और फिर रुँधे हुए गले से अपने बड़े भाई महाराज युधिष्ठिर से कहा । अर्जुन बोले. महाराज ! मेरे ममेरे भाई अथवा अत्यंत घनिष्ठ मित्र का रूप धारण कर श्रीकृष्ण ने मुझे ठग लिया। मेरे जिस प्रबल पराक्रम से बड़े.बड़े देवता भी आश्चर्य में डूब जाते थे, उसे श्रीकृष्ण ने मुझसे छीन लिया । जैसे यह शरीर प्राण से रहित होने पर मृतक कहलाता है, वैसे ही उनके क्षणभर के वियोग से यह संसार का अप्रिय दिखने लगता है ।

देवहूति द्वारा अपने पुत्र कपिल मुनि से ज्ञान प्राप्ति हेतु निवेदन करने का मार्मिक प्रसंग है। देवहूति कहती हैं कि भूमन्! प्रभो! इन दुष्ट इंद्रियों की विषय लालसा से मैं बहुत ऊब गई हूँ और इनकी इच्छा पूरी करते रहने से ही गौर अज्ञानांधकार में पड़ी हुई हूँ । अब आपकी कृपा से मेरी जन्मपरंपरा समाप्त हो चुकी है, इसी से इस दुस्तर अंधकार अज्ञानांधकार से पार लगाने के लिए सुंदर नेत्र रूप आप प्राप्त हुए हैं। [21] आप अपने भक्तों के संसाररूप वृक्ष के लिए कुठार के समान हैंय मैं प्रकृति और पुरुष का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से आप शरणागत वत्सल की शरण में आई हूँ। आप भागवत धर्म जानने वालों में सबसे श्रेष्ठ हैं, मैं आपको प्रणाम करती हूँ ।

तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं
स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम् ।
जिज्ञासयाहं प्रकृतेः पूरुषस्य
नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम् ॥ [22]

श्रीमद्भागवत पुराण में श्री कृष्ण की विरह व्यथा से व्याकुल गोपियों की मनोदशा का मार्मिक चित्रण किया गया हैं। श्री कृष्ण की विरह व्यथा में व्याकुल गोपियां बड़े.बड़े वृक्षों से जाकर पूछती हैं.

दृष्टो वः कच्चिदश्वत्थ प्लक्ष न्यग्रोध नो मनः ।
नन्दसूनुर्गतो हृत्वा प्रेमहासावलोकनैः ॥ [23]

हे पीपल, पाकर और बरगद! नन्दनन्दन श्यामसुन्दर अपनी प्रेमभरी मुसकान और चितवन से हमारा मन चुराकर चले गये हैं। क्या तुमलोगों ने उन्हें देखा है? कुरबक, अशोक, नागकेशर, पुन्नाग और चम्पा! बलरामजीके छोटे भाई, जिनकी मुसकान मात्र से बड़ी.बड़ी मानिनियों का मानमर्दन हो जाता है, इधर आये थे क्या?' (अब उन्होंने स्त्रीजातिके पौधोंसे कहा.) 'बहिन तुलसी ! तुम्हारा हृदय तो बड़ा कोमल है, तुम तो सभी लोगों का कल्याण चाहती हो। भगवान के चरणों में तुम्हारा प्रेम तो है ही, वे भी तुमसे बहुत प्यार करते हैं। तभी तो भौंरों के मँडराते रहने पर भी वे तुम्हारी माला नहीं उतारते, सर्वदा पहने रहते हैं। क्या तुमने अपने परम प्रियतम । श्यामसुन्दर को देखा है? प्यारी मालती! मल्लिके! । जाती और जूही! तुमलोगों ने कदाचित् हमारे प्यारे माधव को देखा होगा। क्या वे अपने कोमल करों से स्पर्श करके तुम्हें आनन्दित करते हुए इधर से गये हैं?'॥'रसाल, प्रियाल, कटहल, पीतशाल, कचनार, जामुन, आक, बेल, मौलसिरी, आम, कदम्ब और नीम तथा अन्यान्य यमुना .के तटपर विराजमान सुखी तरुवरो! तुम्हारा जन्म.जीवन केवल परोपकार के लिये है। श्रीकृष्ण के बिना हमारा जीवन सूना हो रहा है। हम बेहोश हो रही हैं। तुम हमें उन्हें पाने का मार्ग बता दो'। [24]

निष्कर्ष

मानव का आंतरिक व बाह्य जीवन प्रकृति के वातावरण में प्रभावित व व्यतीत होता है । सात्विक, सौम्य, शांत प्राकृतिक वातावरण में मानव मन शांति सहित श्रेष्ठ व्यवहार की ओर अग्रसर होता है व अशांत, प्रदूषण युक्त, प्रकृति से दूर, कोलाहल पूर्ण वातावरण में मानव स्वास्थ्य हानी के साथ अशांति का अनुभव व मानसिक रोगों को आमंत्रित करता हैं । अर्थात प्रकृति का संतुलन मानव समाज हेतु हितकर हैं व प्रकृति का असंतुलन घातक है ।

श्रीमद्भागवत पुराण के अनेक प्रसंगों में प्राकृतिक असंतुलन का कारण मनुष्य का दुष्ट होना, स्वार्थी व अमर्यादित जीवन होना व युद्ध आदि रहा हैं तथा वर्तमान में भी प्राकृतिक विनाश व असंतुलन का कारण मनुष्य कि स्वार्थवादि प्रवृत्ति व परमाणु बम आदि घातक हथियार ही हैं जिससे वर्तमान में अनेक प्राकृतिक उपद्रव दृष्टिगोचर हो रहे हैं । श्रीमद्भागवत पुराण में प्रकृति की प्रशंसा का वर्णन भी हैं जिसमें प्रकृति का मानवीय रूप बताकर संकेत किया गया है कि श्रेष्ठ पुरुषों के जन्म तथा श्रेष्ठ व निस्वार्थ महापुरुषों व सज्जनों की उपस्थिति में प्रकृति प्रसन्न होती हैं तथा उनकी सेवार्थ प्राकृतिक शांति व समृद्धि में वृद्धि करती हैं ।

अतः मानव को अपनी आंतरिक शुद्धता व स्वार्थवादी विचारधारा से परे उच्च विचार के साथ ब्राह्य प्रकृति के आदर . सत्कार के साथ उसके वर्धन में सहभागी होना होगा, तभी श्रेष्ठ व सुंदर पृथ्वी के साथ श्रेष्ठ जीवन की कल्पना की जा सकती है।

सन्दर्भ

1. श्रीमद्भागवत पुराण, श्लोक 9, **अध्याय** 17, **स्कंध** 5
2. वही 42/8/1
3. वही 19 - 20/ 6/11
4. वही 7-9/18/10
5. वही 35-36/11/10
6. वही 8/8/5
7. वही 14/5/11
8. वही 7/15/7
9. वही 10/52/10
10. वही 15-18/14/ 1
11. वही 3- 7 / 17/3
12. वही 4-5 / 10 / 1
13. वही 53/ 1 / 4
14. वही 4 / 18 / 8
15. वही 6-7 / 18 / 4
16. वही 65 / 24 / 4
17. वही 17-19 / 19 / 3
18. वही 49-50 / 10 / 8
19. वही 1-6 /15/1
20. वही 7- 8 / 25 / 3
21. वही 11 / 25 / 3
22. वही 5 / 30 / 10
23. वही 6- 9 / 30 / 10